आंतर - भारती

हिन्दी मासिक पत्रिका

''आंतर भारती'' स्वप्नद्रष्टा
साने गुरुजी

संस्थाध्यक्ष
ॲड.आनंदमोहन माथुर

प्रेरक, संवर्द्धक-संपादक
स्व.यदुनाथ थत्ते

प्रबंध संपादन कार्यालय
आंतर भारती
साने गुरुजी मार्ग,
औराद शहाजानी - 413 522 (महा.)
ईमेल-antarbharati.patrika@gmail.com

संपादन कार्यालय
द्वारा, डॉ.सी.जय शंकर बाबु
सहायक प्रोफ़ेसर, हिन्दी विभाग, पांडीच्चेरी - विश्वविद्यालय, कालापेट, पुदुच्चेरी - 605014
ईमेल-editorbabuji@gmail.com

आंतर भारती, साने गुरुजी का एक स्वप्न जो असीम युवा शक्ति की सृजनात्मक उपयोगिता हेतु समर्पित, युवाओं की सम्भाव्यता, प्रवीणता, प्रेरणा व विश्वास के नए आयाम प्रदान करती है.

मुख्य संपादक
प्राचार्य सदाविजय आर्य
09823156777

visit us : antarbharati.org.in

कार्यकारी संपादक
डॉ.सी.जयशंकर बाबु
09843508506

संपादक
डॉ.विजया वारद ◆ ज्योतिराव लढ़के

मार्गदर्शक
एस.एन.सुब्बाराव ◆ पांडुरंग नाडकर्णा ◆ मुरलीधर शहा

सहयोगी
मधुश्री आर्य ◆गोपाल सत्पुरे
सभी छायाचित्र - प्राचार्य सदाविजय आर्य

प्रकाशित सामग्री से प्रकाशक / संपादक सहमत ही हैं ऐसा न मानें

ANTAR BHARATI : A dream of Sane Guruji committed to the constructive utilization of boundless Youth Power, gives new dimensions to the Potentiality, Skill, Inspiration & Belief of the youth.

आंतर भारती (मासिक) पत्रिका मुद्रक, प्रकाशक सदाविजय आर्य द्वारा **साईराम ग्राफीक्स**, लातूर से गणेश ऑफसेट, उदगीर हेतु मुद्रित कर आंतर भारती संकुल, औराद शहाजानी से प्रकाशित.

इस अंक में...

संपादकीय -	डिजिटल साक्षरता बनाम भारतीय भाषाएँ	५
आंतर भारती - १	तुका म्हणे	७
आंतर भारती - २	बसव वचन	९
आंतर भारती - ३	तिरुवल्लुवर वाणी	१०
काव्य भारती - १	पर्यटन केंद्र एवं तीर्थस्थल	११
विशेष आलेख -१	मनोचिकित्सा की अहमियत	१२
पत्र भारती - २		१४
चिंतन भारती - १	अधिकारों में उलझते बच्चे	१५
चिंतन भारती - २	अध्यादेश : शासन का अलोकतांत्रिक पक्ष	१८
विशेष आलेख -२	आदिवासी : खाद्य सुरक्षा से असुरक्षा की ओर	२१
समाचार भारती-१	नशा मुक्ति शिविर में युवाओं ने लिया गाँव को नशा मुक्त बनाने का संकल्प-	२७
काव्य भारती-२	लानत भेजो उस राष्ट्र पर...	२८
काव्य भारती-३	सबसे ख़तरनाक	२९
बाल भारती -१	चमकते तारे	३०
समाचार भारती-२	अब महिलाएँ अस्मिता की लड़ाई लढें	३१

हमारा ई-मेल का पता

e-mail : antarbharati.patrika@gmail.com
raavas@rediffmail.com
लेख इस ई-मेल पर भी भेजे जा सकते हैं

आंतर भारती पत्रिका के ग्राहक बने / बनाएँ

संपादकीय...

डिजिटल साक्षरता बनाम भारतीय भाषाएँ

सूचना एवं संचार क्रांति की जड़ें विकसित देशों में ही नहीं विकासशील देशों में भी सुदृढ़ होने लगी हैं. भारत इसका कोई अपवाद नहीं है. यहाँ भी हर क्षेत्र में तकनीकी सुविधाओं, प्रौद्योगिकी के चमत्कारिक प्रभावों का लाभ भरपूर उठाया जा रहा है. कंप्यूटरीकरण के आरंभिक चरण ने सरकारी नौकरों के आक्रोष का सामना किया, यह असंतोष इस बहाने फैल रहा था कि कंप्यूटरीकरण से रोज़गार की समस्या उत्पन्न हो जाएगी, नौकरीपेश लोगों के हितों को भी खतरा होगा...आदि. मगर धीरे-धीरे इन वर्गों में ऐसी चिंताएँ दूर होती गईं. इसका प्रबल कारण यह भी था कि पहले हर कोई अपने बेटे-बेटी डॉक्टर या इंजनीयर बनाने के लिए अपेक्षित शिक्षा दिलाने के लिए ललायित पाए जाते थे, मगर अब स्थिति बदल चुकी है, कई परिवारों में यही तमन्ना पलने लगी है कि बच्चे सॉफ़्टवेयर की दुनिया में पदार्पण करें तो संपन्नता के सपने या अमरीका के जीवन के सपने अपने आप साकार हो पाएंगे.

अब ये सब सपने साकार हो पा रहे हैं. कंप्यूटर एवं संचार प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में नौकरियों-धंधों के कई रूपों के विकास के साथ ही रोज़गार के भी कई रूपों में विकास होता नज़र आया है. कंप्यूटर व इंटर्नेट आधारित सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी ने हमारे पेशों के प्रमुख क्षेत्र ही इनके दायरे में गए, मगर लगभग परंपरागत सभी क्षेत्र इनकी चपेट में आ रहे हैं. वैसे कंप्यूटरीकरण ने निश्चय ही परंपरागत व्यवसायों, नौकरी धंधों को जबर्दस्ती प्रभावित किया है, इसे अपनाने वाले अपने क्षेत्र में आज भी अस्तित्व कायम रखते हुए आगे बढ़ रहे हैं, जो इसे न अपना पाए, वे इस कंप्यूटरीकरण की निर्ममता के दुष्प्रभाव से दयनीय स्थिति में कहीं तड़पते रह गए हैं.

अब ऐसा दौर सामने आ चुका है कि दो दशकपूर्व जहाँ टेलिफोन कनेक्शन के लिए महीनों, सालों की प्रतीक्षा करनी पड़ती थी, अब हर हाथ तक स्मार्ट फोन की पहुँच है जिसमें इंटर्नेट की सुविधा के साथ हर मुट्ठी में पूरा ब्रहांड समाहित होता जा रहा है. इन सुविधाओं के प्रयोग के चलते पुनः हर परंपरागत क्षेत्र में

कई रूपों में सूचना एवं संचार तकनीकों से संबद्ध लाभ कई रूपों में मिलते जा रहे हैं - जैसे हर क्षेत्र में कार्य की सुविधाओं के विकास के रूप में कंप्यूटर आधारित कई साधन उपलब्ध होते जा रहे हैं और इनसे हर क्षेत्र में नई-नई संभावनाएँ बढ़ रही हैं. उदाहरण के लिए चिकित्सा व स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र को लें तो कई उपकरणों के आविष्कार से रोग निर्धारण एवं चिकित्सा में बड़ी क्रांति उपस्थित हो गई है, वहीं परंपरागत रोगों की जगह कंप्यूटर व इंटर्नेट के बढ़ते प्रभाव से नई जीवन-चर्याओं, जीवन की नई शैलियों से कई नए रोगों का जन्म हो रहा है, कई रोगों की चिकित्सा की कई नई शाखाओं का विकास और तदनुरूप कई विशेषज्ञों की जरूरत भी बढ़ती जा रही है. यह एक चक्रीय व्यवस्था के रूप में नज़र आती है. खैर ... यह तो रही सूचना संचार प्रौद्योगिकी के व्यापक प्रभाव क्षेत्र का एक सीमित व सतही अवलोकन की बात.

सुविधाओं, साधनों व उपकरणों की सर्वसुलभता की दिशा में आगे बढ़ते हुए कई साधन अपेक्षाकृत रूप से सस्ते दामों में भी उपलब्ध होते जा रहे हैं. लगभग तीन हजार रुपयों में ही अब स्मार्ट फोन अथवा टैबलेट की खरीद संभव हो पा रही है. इन उपकरणों की पहुँच का दायरा जैसे-जैसे बढ़ता जा रहा है, वैसे-वैसे डिजिटल साक्षरता की मांग बढ़ती जा रही है. हर व्यक्ति तक इन साधनों व उपकरणों की पहुँच से इन साधनों के प्रयोग की साक्षरता भी अपने आप बढ़ती जा रही है. कंप्यूटर के आगमन के आरंभिक चरण में कंप्यूटर प्रशिक्षण की मांग बहुत थी, वह धीरे-धीरे कम होती गई, इसका प्रमुख कारण इन साधनों, उपकरणों की सर्वसुलभता से विकसित चेतना से लोग अपने आप इनके अनुकूल बनाते हुए अपने को डिजिटल साक्षरता के दायरे में लाकर स्वयं 'डिजिटल साक्षर' साबित हो रहे हैं. बड़े आश्चर्य की बात यह है कि जहाँ एक पीढ़ी के पढ़े-लिखे लोग भी मोबाइल व कंप्यूटर के इस्तेमाल से कतराते बैठे हैं, वहीं दूसरी तरफ़ निरक्षर लोग भी धड़ल्ले से इनके कुशल प्रयोग की दिशा में आगे बढ़ते नज़र आए हैं.A B C D की पहचान भी निरक्षरों में बढ़ती जा रही है, इन साधनों-उपकरणों की सर्वसुलभता व पहुँच से. तब तो साक्षरता की दर की दृष्टि से विकसित देशों की तुलना में हमारे पिछड़ेपन की चिंता क्या अब दूर हो जानी चाहिए ? अब साक्षरता अभियानों की क्या कोई ज़रूरत नहीं है

(पृष्ठ २४ पर...)

आंतर भारती - ९

तुकाम्हणे

(मराठी)

भेटीलागीं जीवा लागलीसे आस

भेटीलागीं जीवा लागलीसे आस ।
पाहे रात्रीं दिवस वाट तुझी ।।धृ।।
पूर्णिमेचा चंद्रमा चकोरा जीवन ।
तैसें माझें मन वाट पाहे ।।१।।
दिवाळीच्या मुळा लेंकी असावली ।
पाहतसे वाटुली पंढरीची ।।२।।
भुकेलिया बाळ अति शोक करी ।
वाट पाहे परि माउलीची ।।३।।
तुका म्हणे मज लागलीसे भूक ।
धांवूनि श्रीमुख दावीं देवा ।।४।।

हिंदी काव्यानुवाद :-

तेरे मिलन की आस लगी है ।

प्राण तेरी ही राह निहारें, निसिदिन यह ही लगन लगी है ।।१।।
ज्यों चंद्रमा है चकोर का जीवन, उसका जीव-प्राण है
त्योंही मेरे मन में तेरे मुख-दर्शन की प्यास जगी है ।।२।।
आयी दीवाली, बेटी सोचती, नैहर से कब आवे बुलावा ।
पंढरपुर की राह मैं तकता, उसी सोच में दृष्टि पगी है ।।३।।
भूखा बालक व्याकुल होकर, देखे कब मैया आवेगी ।।
दसों दिशाएँ सूनी लगतीं, दृष्टि मेरी भी ठगी-ठगी है ।।४।।
तुका कहे बडी भूख लगी है, आ री मैया, दूध पिला दे ।
आ दौडकर, मुख दिखला दे, काहे री मैया, देर लगी है ।।५।।

हिन्दी : प्राचार्य वेदकुमार वेदालंकार,
परिमल २८/८१, विद्या नगर, उस्मानाबाद.

English Translation :-

I am ever longing to meet You

Bhetilaagin jeeva lagaleese aas

I am ever longing to meet You, and I await Your arrival day and night.
My yearning to meet You is as intense as that of the Chakora[1].
Who awaits the full moon !

The bride dreams of the Diwali[2] invitation from her mother.
Similarly I eagerly look forward to my visit to Pandhari[3].

Says TUKA, please Sri Hari[4], run show me Your resplendent Presence
As I am dying to be with You.

---

1. Chakora - Mythical bird. (nightjar) 2. Diwali - festival of Lights.
3. Pandhari - Pandharpur. 4. Sri Hari - Lord Vitthala

English : D.S.VAJRAM,
3, Praram, Lakaki Rasta, Pune-411016.

भारतीय भाषाओं के लिए डिजिटल साक्षरता अभियान के तहत...
आंतर भारती व भारतीय ज्ञानपीठ, उज्जैन के संयुक्त तत्वावधान में
एक दिवसीय राष्ट्रीय कार्यशाला दिनांक ११ मई, २०१४ को
भारतीय ज्ञानपीठ, उज्जैन में आयोजित होगी -
विषय : ***बहुभाषाई कंप्यूटिंग तथा शिक्षण व अधिगम में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का प्रयोग***
(National Workshop on Multilingual Computing & Use of ICT in Teaching and Learning)
शिक्षक, छात्र व भारतीय भाषाओं के कंप्यूटिंग में रुचि रखनेवाले सभी लोग
इस कार्यशाला में प्रतिभागियों के रूप में शामिल हो सकते हैं.
अधिक जानकारी के लिए संपर्क सूत्र -

आंतर भारती
प्राचार्य सदाविजय आर्य - ०९८२३१५६७७७
antarbharati.patrika@gmail.com
डॉ. सी. जय शंकर बाबु - ०९४४२०७१४०७
professorbabuji@gmail.com

भारती ज्ञानपीठ
कृष्ण मंगल सिंह कुलश्रेष्ठ
भारतीय ज्ञानपीठ, माधव नगर,
रेल्वे स्टेशन के पीछे,
उज्जैन (म.प्र.), मो. ०७३४२५५५०२

आंतर भारती - २

बसव वचन

मूल कन्नड वचन :

यन्न चित्तवु अत्तीय हण्णु नोडय्य
विचारिसि दोडेनु हुरुळिल्लवय्य
प्रपंचीनडं बिनल्लि यन्ननोंदु
रुपमाडि नीविरिसिदिरि कूडल संगम देव ।

हिंदी काव्यानुवाद :

मेरा मन गुलर के पके हुए फल जैसा है
सोचे तो उसमें सत्य नहीं है
इस संसार में मुझे शांति प्रदानर कीजिए
कूडल संगम देव ।

भाष्य : इस वचन में मनुष्य की मानसिकता को स्पष्ट करने हेतू गुलर के पके हुए फल का उदाहरण देकर यह स्पष्ट करना चाहते है कि उसके मन में अनगिनत चिंताये, कुविचार भरे होते हैं. उनसे वह मुक्त नही होता. ऊपर से गुलर का पका हुआ फल सुंदर तथा एक लगता है लेकिन अंदर से उसका चित्त एक नहीं होता. कई विचारोंसे आक्रांत होता है. ऐसे इस संसार में मेरे मन में शांती बनी रहे यही मेरी आपसे प्रार्थना है. उस एकमात्र ईश्वर को छोडकर इस संसार में शाश्वत कुछ भी नही है.

इस वचन के माध्यम से महात्मा बसवेश्वरजी ने सर्वसामान्यों की मानसिकता को चित्रित किया है.

डॉ. इरेश सदाशिव स्वामी
'विद्या', १२, ब्रह्मचैतन्य नगर, विजापूर रोड, सोलापूर - ४१३००४

आंतर भारती - ३

तिरुवल्लुवर वाणी

तिरुक्कुरल

तमिलमूल - संत तिरुवल्लुवर
देवनागरी लिप्यांतरण एवं हिंदी हाइकु अनुवाद -
डॉ.सी.जय शंकर बाबु

प्रथम खंड - अरत्तुपाल (धर्म खंड)

इल्लऱवियल् (गृहस्थ-धर्म)

अध्माम ५. वाळ्क्कैत्तुणै नलम् (सहधर्मिणी के सद्गुण)

इल्लदेन् इल्लवळ् माण्बानाल् उळ्ळदेन्
इल्लवळ् माणाक्कडै । (कुरल - ५३)

पत्नी गुणी हो
गुण संपन्न, न हो
तो विपन्न ही ।

भावार्थ - उत्तम गुण-संपन्न पत्नी हो तो वह गृह सदैव संपन्न होगा, अन्यथा सब कुछ अभावमय समान है ।

पेण्णिर् पेरुन्दक्क यावुळ कर्पेन्नुम्
तिण्मैयुण् डाहप्पू पेरिन। (कुरल - ५४)

सम्मान्य होती
यत्र तत्र सर्वत्र
सतीत्य शक्ति।

भावार्थ - सतीत्व शक्ति संपन्न नारी सर्वत्र सम्माननीय होती है ।

पर्यटन केंद्र एवं तीर्थस्थल

बंगलौर

- टी.ई.एस.राघवन

कर्नाटक के राज्य का यह है शासन केन्द्र ।
बंगलौर है आजकल कंप्यूटर का केन्द्र ।।
ऐतिहासिक विचार से दर्शनीय है स्थान ।
हुकुम चलाते थे यहाँ, पटु टीपू सुलतान ।।
'बागों का शहर', नाम से, बंगलौर विख्यात ।
कन्नड हिंदी तमिल की, भाषाएँ हैं ज्ञात ।।
हैदर अली से निर्मित, 'लाल बाग' कमनीय ।
पेड़ पुराने और यहाँ, फुहार सुदर्शनीय ।।
'कब्बन पार्क' पथिकों का मनपसंद है स्थान ।
कर्नाटक हाईकोर्ट, दर्शनीय है स्थान ।।
बाहुबली की मूर्ति है, नवीन भाँति प्रतीत ।
रण का, टीपू का किला, साक्षीभूत प्रतीत ।।
बंगलौर में म्यूजियम, संग्रहालय अनेक ।
उनमें सिक्के, मूर्तियाँ, पडती दीख अनेक ।।
नंदी मंदिर, 'अलसूर, झील' देखने योग्य ।
'देवनारायण दुर्गा सावन' लखने योग्य ।।
बाल भवन में सिनेमा की सुविधा उपलब्ध ।
ट्रेन-टाय घुडसवारी, की सुविधा उपलब्ध ।।
सुवर्ण खानें कोलार दर्शनीय हैं स्थान ।
पर्लवैली झरना तो, पिकनिक का है स्थान ।।

- १, हनुमंतरायन मंदिर गली,
ट्रिप्लिकेन, चेन्नई - ६००००५.

मनोचिकित्सा की अहमियत

- भारत डोगरा

भारत के गांवों में मानसिक रोगियों की दशा अत्यंत चिंताजनक है. हमारे यहां किसी भी मानसिक समस्याग्रस्त व्यक्ति को पागल से कम की संज्ञा नहीं दी जाती. जबकि वास्तविकता यह है कि अधिकांश मानसिक रोग सामान्य उपचार एवं सलाह मशविरे से दूर किए जा सकते हैं. छत्तीसगढ़ में कार्यरत जनस्वास्थ्य सहयोग ने इस दिशा में महत्वपूर्ण पहल की है. (का.सं.)

मानसिक स्वास्थ्य से जुड़ी समस्याएं सुदूर के अनेक गांवों में भी गंभीर रूप से फैली हुई हैं, परंतु इनकी ओर बहुत कम ध्यान दिया जाता है. वैसे ही देश में मनोचिकित्सकों की बहुत कमी है, दूसरे वे बड़े शहरों में ही केंद्रित हैं. दूरदराज के गांवों तक उनके पंहुचाने की उम्मीद भी बहुत कम है. इसी वजह से अनेक गांवों में स्वास्थ्य की अन्य समस्याओं के बीच प्राय: मनोरोगियों को उपेक्षित कर दिया जाता है या उन पर समुचित ध्यान नहीं दिया जाता है.

जन स्वास्थ्य सहयोग ने बिलासपुर जिले (छत्तीसगढ़) के अपने सीमित कार्यक्षेत्र में दूरदूराज के आदिवासी बहुल गांवों में इस समस्या की गंभीरता को समझने का प्रयास किया है. हालांकि अभी इसपर विस्तृत सर्वेक्षण अध्ययन तो नहीं हुआ है, फिर भी आरंभिक जानकारी के रूप में जो तथ्य सामने आए हैं वे गहरे दुख-दर्द की जानकारी देते हैं.

यहां सामने आया है कि दूरदराज के इन गांवों में आत्महत्या के प्रयास के अनेक मामले सामने आते रहते हैं. ऐसे कई प्रयास क्षणिक आवेश या क्रोध के कारण भी हो जाते हैं. एक बड़ी समस्या यह है कि घर-घर में कीटनाशक दवाओं के रूप में जहर बहुत आसानी से उपलब्ध हा गया. छोटा-बड़ा झगड़ा होने पर कई गांववासी क्षणिक आवेश में यह जहरीली दवा खा लेते हैं. बाद में वे पछताते हैं, कहते हैं कि वे मरना नहीं चाहते हैं. पर तब तक बहुत देर हो जाती है. समय पर अस्पताल ले जाने से यदि मौत से बच भी गए तो उन्हें जीवनभर कई अन्य समस्याएं सहन करना पड़ती हैं. जरूरत इस बात की है कि इस तरह की

वारदातें न हों. ऐसे लक्षण प्रारंभिक स्थिति में ही पहचाने जाएं जिसमें ऐसी प्रवृत्ति का संकेत मिलता है व स्थिति बिगड़ने से पहले ही इन्हें संभाल लिया जाए.

वरिष्ठ स्वास्थ्य कार्यकर्ता बेन रत्नाकर ने बताया कि उन मरीजों की स्थिति अधिक गंभीर होती है जो हिंसक होते हैं. इनमें पुरुषों की संख्या अधिक होती है. उन्हें अस्पताल तक लाना ही बहुत कठिन है. परिवार के सदस्य भी अक्सर चाहते हैं वे कहीं चले जाएं तो अच्छा है. घूमते हुए यह लोग कहीं निकल जाते हैं तो इसे अच्छा ही समझा जाता है. यदि महिला इस स्थिति में हो तो उसे मायके भेज दिया जाता है. पर कभी-कभी तो इधर-उधर कहीं छोड़ दिया जाता है. वह कहां गई, इसका पता भी नहीं चलता है. जो मानसिक मरीज चुप रहते हैं व उदास रहते हैं, उनमें भी महिलाओं की स्थिति अधिक चिंताजनक है. कई बार पुरुष दूसरी शादी कर लेते हैं तो इस महिला की और भी उपेक्षा हो जाती है और उसे परिवार से कोई अपनत्व तक नहीं मिलता है.

इसके अतिरिक्त शराब के नशे के कारण हुए मानसिक रोगियों की भी बड़ी संख्या है. शराब के अधिक सेवन का मस्तिष्क पर प्रतिकूल असर पड़ता है. इस कारण मानसिक संतुलन बिगड़ सकता है, व्यक्ति अधिक शक्की व हिंसक हो सकता है, उसे झटके आ सकते हैं व वह बेहोश हो सकता है.

मानसिक स्वास्थ्य की समस्याओं में गंभीरता को समझते हुए जन स्वास्थ्य सहयोग ने अपने कार्यक्षेत्र के गांवों में ऐसे कई उपेक्षित रोगियों का इलाज आरंभ किया है. उनका प्रयास है कि समुदाय आधारित मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम विकसित किया जाए जो परिवार के सदस्यों व समुदाय की भागीदारी से चले.

टेलीविजन या वीडियो कांफ्रेंसिंग के माध्यम से जाने-माने मनोचिकित्सक डा. प्रशांत गोगिया का परामर्श भी अनेक मरीजों के लिए नियमित तौर पर प्राप्त किया जा रहा है. डा. प्रशांत गोगिया ने बताया कि कैसे दूरदराज के क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के लिए यह बहुत उपयोगी है. लेकिन इसकी कुछ सीमाएं भी हैं. विशेषकर यदि कांऊसलिंग भी करनी तो इस तकनीक की कुछ सीमाएं हैं और हमेशा बनी रहेंगी. परंतु मरीजों के लिए बेहतर माहौल देकर इन सीमाओं को

कुछ कम किया जा सकता है.

डॉ. प्रशांत ने यह भी बताया कि कई शारीरिक समस्याओं के बारे में अधिक गहराई से जानने से पता चलता है कि इसके पीछे कुछ भावनात्मक व मानसिक समस्याएं हैं, उलझनें हैं. इन समस्याओं को कम करने के लिए या समाधान करने के लिए पहली जरूरत तो यह है कि लोग अपनी समस्याओं को साझा कर अपना मन हल्का कर सकें और इसके लिए जरूरी है कि कोई उन्हें सुनने वाला तो हो. इस जरूरत की ओर स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं का ध्यान जाना चाहिए, उन्हें इसके प्रति स्वयं बहुत सचेत होना चाहिए तभी वह समुदाय को इसका महत्त्व बता सकेंगे तदुपरांत ही समुदाय आधारित मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम आगे बढ़ सकेगा.

डॉ. प्रशांत ने बताया कि जो मानसिक रोगी किसी न किसी रूप में हिंसा से प्रभावित हैं, मानसिक स्वास्थ्य की समस्या को अक्सर उनके संदर्भ में भी चर्चा में लाया जाता है. यह उचित नहीं है. संख्या में तो ऐसे मानसिक मरीज बहुत कम हैं. जबकि ऐसे मरीज जो काफी समय तक कई समस्याओं को दबाए हुए जी रहे हैं उनकी संख्या कहीं अधिक है. इन बहुसंख्य मानसिक स्वास्थ्य की समस्याओं वाले रोगियों के प्रति सचेत होना व उनकी समस्याओं को समझने व सुलझाने का प्रयास करना जरूरी है.

पत्र भारती -१

भुवनेश्वर
१५/०३/२०१४

महोदय,

आंतर भारती पत्रिका में दिन प्रती दिन सुधार ही हो रहा है. मुद्रण, लेख और विचार प्रसंशनीय है. मेरा सुझाव है की मुखपृष्ठ और अन्य जगह छपने वाले फोटो गरीब किसान, मजदूर, वंचित बच्चों के शिक्षा प्रयास, आंदोलन, आदी कार्यक्रम के छपे, तों अच्छा लगेगा. यह मेरी राय है.

भवदीय.

मधु तलवलकर
मो. ०९४२२३३२११६

अधिकारों में उलझते बच्चे

- *प्रशांत कुमार दुबे*

बच्चे भारतीय नीतियों की परिधि से बाहर हो गए हैं. उनके नाम पर चलने वाले तमाम कार्यक्रम और योजनाएं किसे लाभ पहुंचा रही हैं यह किसी से छुपा हुआ नहीं है. आवश्यकता इस बात की है कि प्रकृति के इस सबसे नाजुक अंग को बहुत कोमलता से संवारा जाए. बच्चों की वर्तमान स्थिति को रेखांकित करता महत्वपूर्ण आलेख (का.सं.)

संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार समझौते पर दुनिया के १८९ देशों के राष्ट्राध्यक्षों ने अपने-अपने देशों में बच्चों को सुरक्षित और सम्मानपूर्ण वातावरण देने के लिए सन् १९८९ में हस्ताक्षर किए थे. भारत ने भी सन् १९९२ में इस समझौते पर हस्ताक्षर किए. इस समझौते के पहले भी हमारे संविधान में बच्चों के संदर्भ में बहुत स्पष्ट प्रावधान मौजूद हैं. लेकिन बच्चों को स्वतंत्र इकाई के रूप में परिभाषित करने और उनके मुद्दों को व्यापकता में इस समझौते द्वारा बखूबी देखा गया. समझौते ने कुल ५४ अधिकारों को जिन ४ प्रमुख अधिकारों के इद-गिर्द बुना वे हैं बच्चों के जीवन का अधिकार, विकास का अधिकार, सुरक्षा का और सहभागिता का अधिकार.

सवाल उठता है कि इस सबके बावजूद हम बच्चों के संदर्भ में क्या कुछ सार्थक कदम उठा पाए हैं? बच्चों को लेकर कुछ कानून बनाए हैं, नीतियां भी बनी हैं, लेकिन इस दिशा में उतने आगे नहीं बढ़ पाए, जितना हमें बढ़ना चाहिए था. हमारा देश आज तक बच्चे को परिभाषित ही नहीं कर पाया. इतना ही नहीं हम बच्चों को एक स्वतंत्र इकाई के रूप में नहीं देख पाए. वे आज भी उपेक्षा का जीता जागता दस्तावेज हैं और हमेशा हमारी प्राथमिकताओं से छूटते रहे. नोबल पुरस्कार विजेता ग्रेबिल मिस्ट्राल ने लिखा है कि हम अनेक भूलों और

गलतियों के दोषी हैं और उसमें भी हमारा सबसे बड़ा अपराध है बच्चों को उपेक्षित छोड़ देना.

दुःखद है कि हर साल भारत में लगभग २० लाख शिशु अपना पहला जन्मदिन नहीं मना पाते हैं. माताओं को प्रसव पूर्व मिलने वाली तीन जांचों का प्रतिशत आज भी ५० के पार नहीं पहुंच पाया है. राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के तृतीय चक्र के आंकड़ों के मुताबिक सभी टीकाकरण वाले बच्चों का वर्तमान प्रतिशत ४० से ज्यादा नहीं है. देश में ६ वर्ष से कम उम्र के ४२ फीसदी बच्चे कुपोषण का शिकार हैं. और तो और हम आज तक आधे बच्चों की शिक्षा का ही इन्तजाम तक कर पाए हैं.

संविधान में ही हमने कहा था कि अगले १० वर्षों के भीतर सभी बच्चों को शिक्षा से जोड़ेंगे, पर आजादी के ६७ साल बाद और शिक्षा का अधिकार कानून लागू होने के बावजूद आज तक हम सभी बच्चों को शिक्षा से नहीं जोड़ पाए. जिन बच्चों को शिक्षा मिल भी रही है, उनके साथ गुणवत्ता का संकट बरकरार है. सूचना के अधिकार में भी बच्चों के लिए कोई प्रावधान नहीं है.

आज भारत में सबसे ज्यादा बाल श्रमिक हैं और इस मामले में हमने अपने पड़ोसी देशों पाकिस्तान और बांग्लादेश को भी पीछे छोड़ दिया है. बच्चे कांच, पटाखा जैसे खतरनाक सामान बनाने वाले कारखानों में काम करते हैं. भारत में गुमशुदा बच्चों की तादाद दिनों-दिन बढ़ रही है. हर साल देश में तकरीबन ११ लाख बच्चे गायब हो रहे हैं. लाखों बच्चे सड़कों पर रह रहे हैं. अब तो इन्हें सशस्त्र संघर्षों में भी खपाया जा रहा है. जाति और समुदाय आधारित भेदभाव और लिंग आधारित भेदभाव से आज भी बच्चों को मुक्त नहीं करा पाए हैं.

मध्यप्रदेश में सरकारी कार्यक्रम के तहत विद्यालयों में एक धर्म विशेष की ओर बच्चों को धकेलने के प्रयास जारी हैं.

सहभागिता की दृष्टि से देखें तो हम आज तक बच्चों के लिए कोई ऐसा मंच

विकसित नहीं कर पाए हैं जहां पर बच्चे निर्बाध रूप से अपनी बात रख सकें. इतना ही नहीं अब तो कई विद्यालय बालसभा तक बंद करने पर उतारू हैं. सार्वजनिक स्थलों पर बच्चों के लिए पृथक और सुविधाजनक शौचालय तक नहीं बन पाए हैं? गौरतलब है कि यह सब अनजाने में नहीं हो रहा है.

विस्थापन हमारे दौर की सबसे भीषण त्रासदी है. मध्यप्रदेश में आदर्श पुर्नवास नीति बनी हुई है, लेकिन इसमें बच्चों का उल्लेख तक नहीं है. यानी बच्चों को भी वयस्कों के साथ गिन लिया गया और उनके मुद्दे बिसार दिए गए. मध्यप्रदेश में यह स्थिति ताजातरीन प्रस्तावित चुटका परमाणु विद्युत परियोजना तक में जारी है. यानी इतने शोरशराबे के बावजूद बच्चे हमारे लिए कोई मायने नहीं रखते.

बाल अधिकारों के इस तरह के मखौल उड़ाने और बच्चों को लगातार हाशिये पर लाने से लगता है कि बच्चों को अधिकार जरूर दिए गए हैं, लेकिन दरअसल वे हाथी के दांतों की तरह ही हैं. जब तक इन अधिकारों को सुनिश्चित करने वाली मशीनरी बच्चों के नजरिये से काम नहीं करेगी और इन्हें लागू कराने की राजनीतिक इच्छाशक्ति नहीं होगी तब तक बच्चे यूं ही उपेक्षित होते रहेंगे. बड़े अफसोस की बात है कि इतने सालों बाद भी राजनीतिक दलों के घोषणापत्रों में बच्चों का मुद्दा शामिल करने के लिए सिविल सोसाइटी को मशक्कत करनी पड़ती है. क्या आबादी के इतने बड़े हिस्से को केवल इसलिए उपेक्षित रखा जाएगा, क्योंकि एक मतदाता के रूप में उनकी राजनीतिक भागीदारी नहीं है?

मीडिया भी बच्चों के मुद्दे पर बेरुखी दिखाती है. सचिन तेंदुलकर के क्रिकेट खेलने के २४ साल इस मीडिया को याद रहते हैं, लेकिन बाल अधिकार समझौते के २१ साल पर इसी मीडिया की ना तो नजर है और ना ही उसकी प्राथमिकता. दूरदर्शन को छोड़कर किसी भी चैनल ने इस दिन के लिए अलग से कोई भी कार्यक्रम आयोजित नहीं किया. बाल अधिकारों के प्रकाश में बच्चों के मुद्दों पर सार्थक बहस छेड़ने की तत्काल आवश्यकता है.

अध्यादेश : शासन का अलोकतांत्रिक पक्ष

- राजिन्दर सच्चर

अध्यादेश की घोषणा औपनिवेशिक शासनतंत्र का प्रतीक है. किसी राजनीतिक पहल को प्रशासनिक आदेश से क्रियान्वित करवाना स्वयमेव लोकतंत्र की अवहेलना है. आवश्यकता इस बात की है कि संविधान संशोधन कर अध्यादेश जारी करने की प्रक्रिया ही प्रतिबंधित की जाए. यदि आकस्मिकता हो तो संसद का आपातकालीन सत्र आहूत कर, प्रस्तावित अधिनियम को पारित करने के प्रयास किए जाएं. (का.सं.)

हालिया समय में कांग्रेसियों में इस बात को लेकर उग्र होड़ मची हुई थी कि भारत के राष्ट्रपति को दो अध्यादेश जारी करने हेतु मनाया जा सके. ऐसा इसलिए किया जा रहा था, क्योंकि यह उनके युवा नायक राजीव गांधी की आकांक्षा थी. यह अलग मुद्दा है कि प्रस्तावित कानूनों का विपक्ष ने भी विरोध नहीं किया था. यदि सदन का प्रबंधन करने वाले ठीक से तैयारी करते तो लंबित विधेयक जिनमें शिकायत निवारण अधिनियम एवं व्हिसल ब्लोअर अधिनियम शामिल हैं, पारित कराए जा सकते थे, लेकिन कांग्रेस का स्वयं को चोट पहुंचाने वाला रवैया और अहंकार तथा विपक्ष की हरकतों के चलते सबकुछ उलट-पलट हो गया. तेलंगाना अधिनियम, जिसे लेकर दोनों ही दल राजनीतिक दाव पेंच में लगे थे, ध्वनि मत से पारित हो गया. लेकिन इसी के साथ सदन की कार्यवाही में मिर्च छिड़काव की शर्मनाक घटना भी दर्ज हो गई. (लेकिन आम जनता को अभी भी खलनायक की जानकारी नहीं है. सरकार ने अभी तक जांच के आदेश भी नहीं दिए हैं.)

याद करिए इन्हीं राहुल गांधी ने सजायाफ्ता कानून निर्माताओं के मसले पर अध्यादेश वाले रास्ते का विरोध करते हुए प्रधानमंत्री और उनकी सरकार को लज्जित करते हुए सार्वजनिक तौर पर अपमानित करते हुए अधिनियम फाड़ डाला था. क्या राष्ट्रपति एक ऐसे अध्यादेश को स्वीकार कर सकते हैं, जबकि मई २०१४ में होने वाले चुनावों के पहले लोकसभा की अब कोई बैठक नहीं होनी है और उसके बाद एक नई लोकसभा गठित होगी? राष्ट्रपति द्वारा इन अध्यादेशों की स्वीकृति संविधान की धज्जियां उड़ाने जैसी होती, क्योंकि इन

कानूनों पर वर्तमान लोकसभा के सदस्यों द्वारा कभी भी विमर्श नहीं किया जाता. लोकसभा के नवनियुक्त सदस्यों से क्या यह उम्मीद की जाती है कि वे अपने कार्य का प्रारंभ पुराने अधिनियमों से करेंगे? इन अधिनियमों के स्वरूप को लेकर मेरी स्वयं की कोई बड़ी आपत्ति नहीं थी. मैने स्वयं उस सार्वजनिक वक्तव्य पर हस्ताक्षर किए थे, जिसमें लोकसभा के समाप्त होने के पूर्व सार्वजनिक शिकायत निवारण अधिनियम एवं व्हिसल ब्लोअर अधिनियम को पारित किए जाने की मांग की गई थी. मगर किन्हीं कारणवश ये पारित नहीं हो पाए. याद रखिए समय हाथ से निकल जाने की दशा में लोकतंत्र धूर्तता भरे तरीके नहीं अपना सकता.

पिछले हफ्तों में समाचार माध्यमों में अध्यादेशों को लेकर चल रही नौटंकी से मैं भौंचका रह गया. यदि सरकार वास्तव में इन अध्यादेशों को पारित करवाने की इच्छुक थी, तो सत्र को कुछ दिनों के लिए विस्तारित करने से उसे किसने रोका था? सत्तारूढ़ दल राहुल गांधी को एकमात्र ''मिस्टर क्लीन'' के रूप में प्रस्तुत करना चाहता था. क्या यह सन् १९४० के दशक में हालीवुड में बनी फिल्म ''मि. स्मिथ गोज टू वाशिंगटन'' या कुछ समय पहले-काफी अच्छे से तैयार इसके भारतीय संस्करण ''मैं आजाद हूं'' जैसी अतिनाटकीय की पुनरावृत्ति थी? मैं अभी भी यह समझ नहीं पा रहा हूं कि इन अधिनियमों को पारित करने हेतु, जिन्हें लेकर विपक्ष की कोई आपत्ति भी प्राप्त नहीं हुई थी, के लिए संसद का सत्र दो दिन के लिए क्यों नहीं बढ़ाया गया? जाहिर है, इसके पीछे की वास्तविक आकांक्षा तो श्रेय लेने की थी, लेकिन दुर्भाग्यवश यह दांव उल्टा पड़ गया.

यदि राष्ट्रपति पर इन अध्यादेशों हेतु जोर भी डाला जाता तो भी यह तो सुनिश्चित था कि इन अध्यादेशों की कोई वैधता या जीवन नहीं था और नई लोकसभा को इन्हें नए कानून के रूप में ही पारित करना पड़ता. क्या इस कार्य की कौढ़ी भर कीमत थी? स्पंदित या जीवंत लोकतंत्र अध्यादेशों से संचालित नहीं होते. यह प्रावधान एक लोकतांत्रिक गणराज्य के लिए अभिशाप है. मैं यह भी मानता हूं कि अध्यादेश जारी करने का अधिकार एक तरह का अराजकतावाद है, जिसकी जड़ें सन् १९१९ और १९३५ के औपनिवेशिक कानूनों में है और इन्हें भारतीय संविधान से विलोपित कर दिया जाना चाहिए. दुनिया के किसी भी अन्य संसदीय लोकतंत्र ऐसा अलोकतांत्रिक प्रावधान नहीं है.

सर्वोच्च न्यायालय ने वाधवा मामले (सन् १९८७) में जोर देते हुए निर्णय दिया था कि राज्यपाल को आपात स्थिति जैसी अवस्था में ही ताबड़तोड़ अध्यादेश जारी करने का अधिकार है. वह भी तब जबकि विधानसभा का सत्र चल नहीं रहा हो. संविधान के अंतर्गत कानून बनाने मूलभूत कार्य विधायिका का है न कि कार्यपालिका का. अनिवार्यतः किसी असाधारण परिस्थिति की वजह से ही अध्यादेश जारी किया जा सकता है न कि किसी राजनीतिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए. यह उन सभी लोकतांत्रिक धारणाओं का विरोधाभासी है कि कार्यपालिका को राजनीतिक ध्येय की पूर्ति के अधिकार हों.

संविधान के अनुच्छेद १२३ के अंतर्गत भी राष्ट्रपति को इसी तरह के अधिकार दिए गए हैं. ये अभी भी हमें औपनिवेशिक काल की याद दिलाते हैं, लेकिन हमने बड़े उल्लास से उन्हें अभी तक जारी रखा हुआ है. इनमें देशद्रोह जैसे ब्रिटिश कानून के अवशेष भी शामिल हैं, जिसने कि हमारे युवा कार्यकर्ताओं खासकर अल्पसंख्यक वर्ग के नौजवानों के जीवन में तूफान सा ला दिया है. अध्यादेश जारी किए जाने के ऐसे अधिकार का किसी लोकतांत्रिक राष्ट्र में कोई स्थान नहीं है. जमीनी हकीकत पर भी थोड़ा ध्यान डालते हैं. अगले दो महीनों में आमचुनाव होने वाले हैं. यदि बहुत संकीर्णता से भी अनुमान लगाए तो वर्तमान लोकसभा के कम से कम आधे सदस्य हार जाएंगे. क्या यह इन अस्वीकृत किए गए राजनीतिज्ञों द्वारा नए सदस्यों के इस अधिनियम को स्वीकार करने या आमूलचूल परिवर्तन के अधिकार को रोकने का प्रयास है? यह व्यर्थ की बात है कि सरकार राष्ट्रपति के पास इन्हें भेजकर इन पर उनकी प्रतिक्रिया जानने का प्रयास किया गया था.

वैसे हमें उत्तर मिल गया है. राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी के शांत, गरिमामय एवं स्पष्ट शब्दों में अपनी वाकपटुता से इन अध्यादेशों की स्वीकृति से इंकार करके देश के लोकतांत्रिक मूल्यों एवं परंपराओं को चिदंबरम द्वारा दर्शाए गए उग्र कानूनी पांडित्य के चलते भी बचा लिया है. विदेश मंत्री सलमान खुर्शीद का आंसू भरा विलाप भी राष्ट्रपति को राहुल गांधी के दृष्टांत को अस्वीकृत करने से रोक नहीं पाया. वैसे भी सलमान खुर्शीद को यह बात दिल पर नहीं लेना चाहिए, क्योंकि आने वाला आमचुनाव राहुल गांधी को अपने दर्शन के परीक्षण का मौका दे ही देगा. वैसे भी अब अध्यादेश का सवाल ही खड़ा नहीं होता. मुझे उम्मीद है कि राहुल और उनके मंझे हुए सलाहकारों को यह पुरानी चेतावनी याद होगी कि आप कितने भी ऊंचे हों कानून आपसे ऊपर ही होता है.

विशेष आलेख - २

आदिवासी : खाद्य सुरक्षा से असुरक्षा की ओर

- *चिन्मय मिश्र*

वन में निवास करने वाली अनुसूचित जनजातियों और अन्य परंपरागत वन निवासियों के, मान्यताप्राप्त अधिकारों में, दीर्घकालीन उपयोग के लिए जिम्मेदारी और प्राधिकरण, जैव विविधता का संरक्षण और परिस्थिति का संतुलन को बनाए रखना और वन में निवास करने वाली अनुसूचित जनजातियों और अन्य परंपरागत वन निवासियों की जीविका तथा खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करते समय वनों की संरक्षण व्यवस्था को सुदृढ़ करना भी सम्मिलित है.

वन अधिकारों की मान्यता अधिनियम-२००६

वन अधिकार (अनुसूचित जनजाति और अन्य परंपरागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम २००६, आदिवासियों को साथ हुए ऐतिहासिक अन्याय की भरपाई की पैरवी करता नजर आता है. लेकिन दूसरी ओर इसके क्रियान्वयन को लेकर बरती जा रही लापरवाही साफ दर्शा रही है कि भारतीय शासन तंत्र इस दिशा में कतई गंभीर नहीं है. जैसा कि कानून की प्रस्तावना में ही स्पष्ट है कि इसके अन्तर्गत जनजातियों एवं अन्य परंपरागत वन निवासियों की जीविका और खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित किया जाना है. लेकिन साथ ही यह पुछल्ला भी जोड़ दिया है कि ऐसा करते समय इसमें वनों की संरक्षण व्यवस्था को भी मजबूत किया जाना चाहिए. इस स्थिति में भारत में जमींदारी प्रथा के संवाहक वन विभाग ने अपनी संपत्ति के संरक्षण के सारे उपाय कठोरता से लागू करना प्रारंभ कर दिए और संरक्षित वन, सुरक्षित वन, वन्यजीवन अभयारण्य, घड़ियाल अभयारण्य, राष्ट्रीय पार्क, पक्षी अभयारण्य एवं बाघ अभयारण्य जैसे तमाम रास्ते निकाल लिए और दूसरी ओर इन वनों में रहने वाले आदिवासियों को इनसे बेदखल कर इनकी जीविका और खाद्यसुरक्षा दोनों ही खतरे में डाल दी.

वहीं दूसरी ओर महाकाय विकास परियोजनाओं जैसे जलविद्युत परियोजनाएं, खनन, परमाणु ऊर्जा, रक्षा योजनाएं आदि अनेकानेक परियोजनाओं की वजह से भी जंगल से आदिवासियों की बेदखली जारी है. अतएव यह समझने के लिए कि आदिवासी समुदाय की खाद्यसुरक्षा पर आए संकट के लिए कौन जिम्मेदार है, हमें किसी अतिरिक्त विशेषज्ञता की आवश्यकता नहीं है. हम सभी

जानते हैं कि आदिवासी एक परिपूर्ण समुदाय है और कुछ वर्षों पहले तक वह सिर्फ नमक लेने के लिए ही अपने परंपरागत वन निवास से बाहर निकलता था. वहां उपलब्ध जैव विविधता उसके जीवन का आधार थी. अपने भोजन का आधे से अधिक हिस्सा उसे यह वन बिना किसी शारीरिक श्रम के उपलब्ध करवा देते थे. यदि हम शहद और महुआ को ही लें तो ये दोनों खाद्य वस्तुएं उसकी शारीरिक ऊर्जा संबंधी अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति कर देती थीं. लेकिन धीरे-धीरे बहुत चालाकी से वन निवासियों को वनों से बाहर कर पहले वनों की परिधि में बसाया गया और इसके बाद कानून का सहारा लेकर उनका वनों में प्रवेश ही प्रतिबंधित करवा दिया गया.

मध्यप्रदेश की सहरिया जनजाति इसका बहुत निर्मम उदाहरण है. करीब दो दशकों पहले इन्हें श्योपुर जिले के पालपुर-कुनो के जंगलों से, एशियाई शेरों (गिर, गुजरात के शेर) के वैकल्पिक निवास के लिए, बाहर खदेड़ दिया गया. जंगलों से निकालकर इन्हें जिन पथरीले इलाकों में बसाया गया वहां खाद्य फसल तो क्या जंगली घास भी ठीक से नहीं उग पाती है. आज ये समुदाय भारत के सबसे कुपोषित समुदायों में से एक है और इस समुदाय के बच्चों की बड़ी संख्या में कुपोषण से मौतें हुई हैं. वहीं दूसरी ओर इनके पारंपरिक खाद्यान्न अब इन्हें उपलब्ध नहीं हो पा रहे हैं और इनकी निर्भरता गेहूं और चावल पर आकर सिमट गई है. इसकी वजह से भी इनमें कुपोषण की संभावना बढ़ती है.

क्या वनों में रहते हुए भी ये लोग कुपोषित थे? इसे हमारी आधुनिक पोषण प्रणाली के नजरिए से समझते हैं. पोषण की आधुनिक दृष्टि से खाद्य पदार्थों को पांच समूहों में विभाजित किया जाता है. पहले समूह में दूध एवं इससे बने पदार्थ (जैसे दही एवं पनीर), दालें और मांस आते हैं. ये हमारे शरीर में प्रोटीन व केल्शियम की पूर्ति करते हैं. दूसरे वर्ग में फल, जैसे संतरा, टमाटर, आम, पपीता, आंवला आदि एवं हरी पत्तियों वाली सब्जियां जैसे पालक, पत्ता गोभी, मेथी व अन्य भाजियां आती हैं, जो कि हमारे शरीर में विटामिन ए, विटामिन साल्ट एवं आयरन पहुंचाती हैं. तीसरी श्रेणी में अन्य सब्जियां जैसे बैंगन, विभिन्न फलियां, कद्दू, लौकी, भिंडी आती हैं, जो कि न्यून माषा में विटामिन खनिज की आपूर्ति करती हैं. चौथे वर्ग में चावल, गेहूं, मक्का, रागी, बाजरा आदि जैसे खाद्यान्न आते हैं और इसी में स्टार्च वाली सब्जियां जैसे आलू, कंद

(सूरन) आदि आते हैं जो हमारे शरीर को कार्बोहाइड्रेड व प्रोटीन देते हैं. पांचवें वर्ग में वसा और तेल आते हैं जो हमें वनस्पति तेलों, मक्खन, घी के अलावा शक्कर व गुड़ आदि के रूप में मिलता है और हमें इससे ऊर्जा (वसा) अनिवार्य वसा एसिड, विटामिन ए (केवल पशुओं की वसा से) एवं कार्बोहाइड्रेट (सिर्फ शक्कर) प्राप्त होता है.

उपरोक्त सविस्तार वर्णन की आवश्यकता इसलिए करनी पड़ी क्योंकि हम शहरी वर्ग का ऐसा अंधविश्वास है कि हम लोग खान-पान को बेहतर समझते हैं और इसका संतुलन बनाकर निरोगी जीवन जीते हैं. लेकिन यदि हम आदिवासी समाज और वनों को आपस में जोड़कर देखें तो साफ नजर आता है कि इसमें से कोई भी ऐसी खाद्य वस्तु नहीं है, जिसका सेवन जंगल में रहकर हमारा आदिवासी समुदाय नहीं कर पाता हो. वहां उसे जानवरों को पालने की सुविधा थी और अधिकांश हरी सब्जियां/पत्तियां, सामान्य सब्जियां, कंद, मांस, वसा, सब उसे जंगल उपलब्ध कराता था. जो अनाज वह वहां पैदा करता था, उसमें किसी भी प्रकार के रसायन फिर वह चाहे खाद के रूप में हो या कीटनाशक के रूप में, का कभी प्रयोग नहीं करता था. वहां बह रही नदियां व तालाब उसे मछलियों के रूप में आहार उपलब्ध कराते थे. यानि इतना तो कहा ही जा सकता है कि उसकी अपनी स्वयं की खाद्यसुरक्षा थी. वैसे इससे भी आगे जाकर यह कहा जा सकता है कि वह खाद्य सार्वभौमिकता के काल में विचरण करता था.

मगर आजादी के बाद धीरे-धीरे इस समुदाय की स्वायत्ता को हथियाने के प्रयास परवान चढ़ते रहे और अंततः उसकी खाद्यसुरक्षा भी खतरे में पड़ गई. इस बीच आधुनिक विकास ने इस समुदाय को कुपोषण का हिस्सेदार भी बना दिया. हमने ऊपर जिन खाद्य समूहों की चर्चा की है वे देश के सभी आदिवासी क्षेत्रों में यानि उत्तरपूर्व से खंभात की खाड़ी तक उपलब्ध थे. नर्मदा घाटी के डूब में आने से पहले वहां कम से कम १२ से १५ प्रकार के अनाज का उत्पादन होता था और १०० से ज्यादा प्रकार की हरी पत्ते वाली सब्जियां जंगलों में मौजूद थीं जो अब सरदार सरोवर परियोजना की डूब में आ चुकी हैं. यहां से बेदखल हुआ आदिवासी समुदाय आज मैदानी इलाकों में रह रहा है और उसकी खाद्यसुरक्षा पर विचार करना अत्यंत आवश्यक है. भारतीय संविधान

के भाग-४, ''राज्य की नीति के निदेशक तत्व में'' स्पष्ट उल्लेख है कि राज्य अपने लोगों के पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को ऊंचा करने और लोक स्वास्थ्य के सुधार को अपने प्राथमिक कर्त्तव्यों में मानेगा. लेकिन राज्य ने अपने इस कर्त्तव्य की ओर से मुंह मोड़ लिया है. वन अधिकार अधिनियम, २००६ भी जीविका और खाद्यसुरक्षा को एक साथ रखता तो है लेकिन उसकी उपलब्धता को लेकर कोई विशिष्ट दिशा-निर्देश नहीं देता.

आदिवासी समुदाय को खाद्यसुरक्षा उपलब्ध कराने के सरकारी प्रयासों को प्रोत्साहित करने की बजाए आवश्यकता इस बात की है कि उन्हें उनके पारंपरिक निवास से उजाड़ा न जाए, क्योंकि उनका परिवेश उन्हें सभी प्रकार की सुरक्षा, जिसमें खाद्यसुरक्षा भी शामिल है, प्रदान करता है.

(पृष्ठ ६ से...)

? ऐसे कई सवाल भी हमारे समाने उपस्थित हो जाते हैं. इन तमाम सवालों के जवाब ढूंढने के लिए हम यदि चिंतन करें तो डिजिटल निरक्षरता का एक विकट रूप भी भारतीय समाज में मुँह बाएं खड़ा है. इससे बचने की दिशा में डिजिटल साक्षरता अभियान की बड़ी जरूरत है. विगत डेढ़ दशकों से डिजिटल साक्षरता के क्षेत्र में निरंतर कार्य करते हुए जो भी मेरा अनुभव रहा है, इस अनुभव के सार के रूप में इस परिप्रेक्ष्य में यदि एक पंक्ति में अभिव्यक्त करना हो तो मैं इस रूप में स्पष्ट करना चाहूँगा कि आज भारतीय भाषाओं का कंप्यूटर में प्रयोग के लिए बढ़ती निरक्षरता भारतीय भाषाओं के अस्तित्व के लिए भी किसी रूप में अभिशाप बनती जा रही है.

विभिन्न प्रकार के साधन सस्ते दामों में बिकते दौर में डिजिटल साक्षरता अपने आप कहीं विकसित हो भी रही है, मगर इसकी तुलना में भारतीय भाषाएं पिछड़ रही हैं. यूनिकोड मानकों के विकास के आलोक में जिस गति से इन भाषाओं तथा इनकी लिपियों का कंप्यूटर व इंटर्नेट की दुनिया में व्यापक अस्तित्व को सुनिश्चित करते हुए विकसित होना था, वह आज तक सही मायने में सुनिश्चित नहीं हो पा रहा है. ज्ञान-विज्ञान की इन भाषाओं में पुस्तकें ई उपलब्ध होने के बावजूद डिजिटल माध्यमों में इन भाषाओं के माध्यम से इनकी पहुँच बहुत ही धीमी गति से ही हो रही है. वैसे कई वर्गों में कई कारणों से आज डिजिटल

विभाजन (Digital divide) जैसी विडंबनात्मक स्थिति भी पैदा हो रही है. इन तमाम तथ्यों के आलोक में डिजटल साक्षरता के अभियानों की बड़ी जरूरत है. पिछड़ती भारतीय भाषाओं के डिजिटल अस्तित्व और इन्हीं भाषाओं के माध्यम से डिजिटल साक्षरता के अभियान भी चलाने की बड़ी ज़रूरत है.

भारत में कंप्यूटर का प्रयोग करनेवाले, कंप्यूटर पर काम करनेवालों में लगभग ८०% से अधिक लोग केवल अंग्रेजी का ही प्रयोग कर रहे हैं. भारतीय भाषाओं के प्रयोग की चेतना और उपलब्ध साधनों, सुविधाओं तथा प्रयोग की सुलभता की जानकारी न होने की वजह से कई तरह के अलग-अलग सॉफ्टवेयरों, चार दशकपूर्व भारतीय भाषाओं के लिए एक मानक कुंजीपटल के रूप में इनस्क्रिप्ट का निर्धारण होने के बावजूद लगभग ३० अधिक अलग-अलग कुंजीपटलों, कुंजी-विन्यासों का इस्तेमाल, प्रचलन और ऐसी सुविधाओं, औजारों, उपकरणों का विकास एक दृष्टि से भारतीय भाषाओं का कंप्यूटर में विकास व प्रयोग की दृष्टि से रची गई एक साजिश या अज्ञान व चेतना के अभाव में फैली धंधेबाजी कही जा सकती है. भाषा-प्रौद्योगिकी के नाम से जो भी विकास की योजनाएं जारी हैं, उनमें भी उद्देश्यों के बीच अपेक्षित समन्वय का अभाव व एकरूपता की कमी आदि कई समस्याओं की वजह से भारतीय भाषाओं के डिजिटल विकास की गति अंग्रेजी की तुलना में काफ़ी धीमी है. वैसे सुविधाओं के विकस की तुलना में प्रयोगकर्ताओं की कमी भी है. इसका एक कारण इनसे संबंधित सूचनाओं का अधिकांश प्रसारण इंटर्नेट के माध्यम से ही होना और जो इंटर्नेट तक नहीं तक अपनी पहुँच सुनिश्चत नहीं कर रहे हैं, वे ऐसी सूचनाओं से अनभिज्ञ व ऐसी कुशलताओं से वंचित रह जाने की वजह से भी भारतीय भाषाओं को डिजिटल माध्यमों में अपने अस्तित्व के लिए तड़पने की स्थिति पैदा हो रही है.

१९वीं सदी के आरंभ से भारत में भावात्मक एकता की ज़रूरत महसूस करते हुए हिंदी प्रचार का जो अभियान आरंभ हुआ, उसकी वजह से हिंदी भारत में अधिकांश लोगों द्वारा बोली व समझी जानेवाली भाषा भले ही बन पाई मगर सरकारी काम-काज की भाषा के रूप में पूरी निष्ठा के साथ स्थापित हो पाने से यह अभी भी पिछड़ रही है. भारतीय भाषाओं के अस्तित्व के विकास के लिए

भारतीय संविधान संकल्पबद्ध है. इस दिशा में आज की परिस्थितियों में भी अपेक्षित कदम उठाकर ही हम भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार व सार्थक अस्तित्व को सुनिश्चित कर पाएंगे. डिजिटल माध्यमों में इनके अस्तित्व व विकास की गति सुनिश्चित करने के लिए इनके लिए उपलब्ध संसाधनों के संबंध में व्यापक प्रचार व प्रशिक्षण अभियानों की जरूरत है. इनके लिए उपलब्ध संसाधनों की जानकारी देते हुए, बहुभाषाई कंप्यूटिंग में कुशलताएं लोगों को प्रदान करते हुए व्यक्तिगत व सहयोगात्मक प्रयासों के रूप में सहस्राधिक कार्यशालाओं के आयोजन व कार्यशालाओं में प्रतिभागियों को प्रशिक्षत करने के अनुभव से यह बात मैं बड़े आदर व गर्व के साथ कह सकता हूँ कि भारत के हर प्रांत के लोगों में कंप्यूटर में अपनी भाषा के प्रयोग की हार्दिक इच्छा व प्रयास की निष्ठा भी है. ज़रूरत इस बात की है कि इस दिशा में भारतीय भाषाओं की प्रयोग की चेतना सहित इन भाषाओं के माध्यम से ही डिजिटल साक्षरता के व्यापक अभियान आरंभ हो जाए. आगामी १० मई को हर वर्ष की भांति पंढरपुर सत्याग्रह व पू.यदुनाथ थत्ते स्मृति समारोह का आयोजन इंदौर में तथा अगले दिन आंतर भारती की ओर से भारतीय भाषा कंप्यूटिंग व डिजिटल साक्षरता की दिशा में एक कार्यशाला का आयोजन भारतीय ज्ञानपीठ, उज्जैन में प्रायोजित हो रहा है. इस दिशा में आंतर भारती के कार्यकर्ताओं से यही अपेक्षा की जाती है के वे सब इस दिशा में संकल्पबद्ध हो जाए कि भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार और भाईचारे की भावना के विकास के लिए इनका निरंतर प्रयोग के प्रयास कंप्यूटर व इंटर्नेट में भी जारी रखें, इसके लिए अपेक्षित चेतना बढ़ाते रहें. शिक्षा-ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्रों में प्रगति के लिए यह प्रयास निश्चय ही आज एक अपेक्षनीय कदम है. ❑

अब अपनी रचनाएँ इस पते पर भेजें

डा.सी.जयशंकर बाबु

सहायक प्रोफेसर, हिन्दी विभाग पांडीच्चेरी विश्वविद्यालय, कालापेठ,

पुद्दुच्चेरी - ६०५०१४

चलध्वनि संपर्क : ०९८४३५०८५०६

ईमेल-editorbabuji@gmail.com /

वेबसाईट-www.yugmanas.blogspot.com

नशा मुक्ति शिविर में युवाओं ने लिया गाँव को नशा मुक्त बनाने का संकल्प-

झाँसी- राष्ट्रीय युवा योजना उ.प्र. के तत्वधान में २७ से ३० मार्च २०१४ को गौना (ललितपुर) उ.प्र. में शिविर आयोजित किया गया. जिसमें १० राज्यो एवं उ.प्र. के ९ जिलों के १८५ युवा साथियो ने भागीदारी की. जिसमें डॉ.एस.एन.सुब्बाराव जी के सानिध्य में गौना गाँव में नशा मुक्ति का प्रयास किया. जिसमें २१० भाईओं ने नशा मुक्त होने के संकल्प लिया. शिविर में विभिन्न राज्यो व प्रदेश के युवाओं ने सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किये. जिसमें डॉ.आर.सी.गुप्ता जी(ट्रस्टी **NYP** नई दिल्ली), अजय पाण्डे जी(लखनऊ), हनुमान सहाय शर्मा जी(राजस्थान), हैप्पी जी(पंजाबं), नीरज भाई(पटना), मधु भाई(उड़ीसा), नरेन्द्र भाई(महाराष्ट्र), डॉ.के.के.श्रीवास्तव जी, नेत्रपाल सिहं वागी ने शिविर में हिस्सेदारी निभाई. तथा सत्यजीत ठाकुर जी(पूर्व मण्डल आयुक्त, झाँसी, मण्डल), संदीप सिहं जी, योगी जी, आदी लोग शामिल हुये तथा **NYP** के साथियो ने कमलेश राय के नेतृत्व में शिविर को सफल बनाया जिसका साथ श्री राम सेवा संस्थान गौना के युवाओं ने दिया. शिविर में देवाशीश मजूमदार, शैलेन्द्र, सगुन, मोहित, गीता, आशीश, जितेद्र, निलिमा, आदि लोग शामिल हुये.

Mr.Kamlesh Rai
National Youth Project, Jhansi, Uttar Pradesh -204128
Ph.+919616024007

१० मई को **इंदौर, मध्य प्रदेश** में होनेवाले
पंढरपुर सत्याग्रह
एवं
पू.यदुनाथजी थत्ते स्मृति समारोह के लिए
आन्तर भारती की ओर से हार्दिक शुभकामनाएँ

लानत भेजो उस राष्ट्र पर...

मूल कवि - खलील जिब्रान
हिंदी रुपांतरकर्ता - डॉ.रवींद्र अग्निहोत्री

मेरे दोस्तो, मेरे हमराहियो !
लानत भेजो उस राष्ट्र पर,
जिसके नेता लोमड़ी जैसे चालाक हों,
जिसके दार्शनिक मदारी हों,
जिसकी कला पैबंद और भौंडी नकल मात्र हो ।
दया का पात्र है वह देश,
जो उन वस्त्रों को धारण करता है
जिन्हें वह स्वयं नहीं बनाता
वह रोटी खाता है,
जिसकी फसल वह नहीं उगाता ।
लानत भेजो उस देश पर,
जो विचारों से लदा है,
लेकिन धर्म और संस्कृति से शून्य है ।
करुणा करो उस देश पर,
जो सपनों में जिस चीज से नफरत करता है,
जाग्रत अवस्था में उसी के आगे सिर झुकाता है ।
दया का पात्र है वह देश,
जिसके सन्त-महात्मा
बहरे और गूंगे हैं ।
और जिसके महापुरुष
अभी पालने में झूल रहे हैं ।
लानत भेजो उस देश पर,
जो टुकड़ों बँटा है
और हर टुकड़ा अपने को एक राष्ट्र समझता है ।

पी-१३८, एम.आई.जी., पल्लवपूरम, मेरठ-२५०११०.

सबसे ख़तरनाक

- शहीत कवि अवतार सिंह पाश

मेहनत की लूट सबसे ख़तरनाक नहीं होती
पुलिस की मार सबसे ख़तरनाक नहीं होती
गद्दारी - लोभ की मुट्ठी सबसे ख़तरनाक नहीं होती ।
बैठे बिठाये पकड़े जाना ख़राब तो है,
भयानक मौन में जकड़े जाना ख़राब तो है,
पर सबसे ख़तरनाक नहीं होता ।

सबसे ख़तरनाक होता है ।
मुर्दा समान शांति से सो जाना ।
न होना तड़प का और सब कुछ सह जाना ।
घर से निकलना काम पर और,
काम से चुपचाप घर आ जाना ।

सबसे ख़तरनाक वो दिशा है,
जिसमें आत्मा का सूरज डूब जाये ।
सबसे ख़तरनाक होता है,
हमारे सपनों का मर जाना ।

❑

चमकते तारे

- रमेश यादव

झिलमिल-झिलमिल करते तारे
दुनिया अपनी सजाते सारे
चंदा के साथ रहते सितारे
नील गगन में चमकते तारे
परियों के संग खेलते वो
दबे पाँव सपने में आ जाते
गीत सुनाते प्यारे-प्यारे
रथ में सवार झूमते - गाते
चंचल तारे सूरज से कहते
अंग हैं हम भी मंडल के प्यारे
दूर भले हम रहते लेकिन
रात के दीपक बनते सारे
स्कूल ना देखो कोई पढ़ाई
परियों से इनकी दिल जमाई
अमावश की रात खोते सारे
पूनम की रात करते रूबाई

रमेश शादव
(स्वातंत्र पत्रकार, लेखक)
४८१-१६१-बी
विनायक वासुदेव, एन.एम.जोशी मार्ग,
चिंचपोकली (पश्चिम), मुंबई-४०००११
फोन -०९८२०७५९०८८

समाचार भारती-२

अब महिलाएँ अस्मिता की लड़ाई लढें

उषाकिरण आत्राम : महिला सन्मान सम्मेलन का शानदार उद्‌घाटन

(बहिणाबाई चौधरी परिसर)

राजूरा, तारीख १५ : आर्यो के संस्कार हुए तब से ही महिलाओं को उप स्थान मिला है. इतिहास में महिलाओं ने निर्भयता से उल्लेखनीय काम किए हैं. वैसे अब महिला किसी भी क्षेत्र में पीछे नहीं हैं. केवल सामाजिक व्यवस्था की वे बली चढ रही हैं. मन खिन्न करनेवाली घटनाएं देखकर महिलाओं ने संगठित होकर आगे बढने का निश्चय करना चाहिए. और महिलाओं ने अपने अधिकार के संरक्षण की, न्याय की, अस्मिता की लडाई लढनी चाहिए ऐसा मत संम्मेलनाध्यक्ष कवित्री उषाकिरण आत्राम ने व्यक्त किया. आज (१५ तक) राजूरा में महिला सम्मेलन का उद्घाटन प्रसिद्ध विचारशील अमर हबीब के हाथों हुआ. इस समय वे सम्मेलनाध्यक्ष थे. उद्‌घाटन सत्र के प्रमुख अतिथि भूतपूर्व राज्यमंत्री डॉ.गजबे, भूतपूर्व विधायक ऍड.वामनराव चटप, भूतपूर्व विधायक सुदर्शन निमकर, भू.विधायक सरोज काशीकर, नाटय्य निर्देशक हरीश इथापे, प्राचार्य अनिल ठाकुरवार, प्रभाकर ढवस उपस्थित थे. उसके पहिले शहर के मुख्य मार्गो से महिला सन्मान जुलूस निकाला गया. इसमें अनेक स्कूलों की विद्यार्थिनी, भजन मंडली व प्रतिष्ठित नागरिक सहभागी हुए थे.

सम्मेलनाध्यक्ष आत्राम ने कहा कि पुरूषों के अत्याचार से महिला बीमार हो रही है. किसी भी क्षेत्र में महिला सुरक्षित नहीं इसलिए इसपर चिन्तन महिलाओं ने करना चाहिए. महिलाओं ने संस्कार करते समय सबसे पहिले लड़का-लड़की का भेद भूलना चाहिए.

उद्‌घाटन के समय मार्गदर्शन करते हुए उद्‌घाटक अमर हबीब बोले कि स्त्रियों की समस्या स्वतंत्र है या समाज की है इस पर विचार करने की आवश्यकता है. धरती का मंडल जिन हाथों पर टिका हुआ है उसमें एक हाथ किसान का है तो दूसरा हाथ स्त्री का है. महिलाओं की आज की स्थिति पर बोलते हुए ॲड. चटप बोले, युवतियों में आत्मविश्वास जमाने की आवश्यकता है. मैं मां के संस्कारों से बना और पत्नी के सहकार्य से विदीर्ण संसार सुधरा इसके लिए मन का नियंत्रण तथा महिलाओं के प्रति आदर महत्व का है.

इस समय सुदर्शन निमकर, डॉ.रमेश गजबे ने महत्वपूर्ण मार्गदर्शन किया. इसी समारोह में वर्धा की कौसल्याबाई लढी को 'विदर्भ रत्न' पुरस्कार से सन्मानित

किया गया. इसके अतिरिक्त मुसलमान महिलाओं के उत्थान के लिए काम करने वाली रूबिना पटेल तथा सामाजिक आशय की फोटोग्राफर संगीता महाजन को ''क्रान्ति ज्योति'' पुरस्कार से सन्मानित किया गया. इसके अतिरिक्त स्थानिक क्षेत्र की कुमारी मुडपल्लीवार, सौ.वाडगुरे को भी सन्मान चिन्ह देकर सन्मानित किया गया.

परिसंवाद - १

स्त्री - कल, आज और आने वाला कल

जग तूफानी गति से बदल रहा है.

अमर हबीब : 'स्त्री - कल आज और आने वाला कल' राजूरा तारीख १६ : खेती में जब से ठगने की प्रथा शुरू हुई तब से ही स्त्रियों को भी ठगने का इतिहास शुरू हुआ. स्त्रियों के पास प्रचंड शब्द सामर्थ्य है. बस उसका सही उपयोग नहीं हुआ. नियोजन मंडल पर उनका बड़ी संख्या में सहभाग होता तो आज चित्र अलग होता ऐसा दृढ मत साहित्यकार अमर हबीब ने व्यक्त किया.

यहाँ आयोजित महिला सन्मान सम्मेलन - 'स्त्री - कल, आज और आने वाला कल' इस विषय पर जो पहला संवाद हुआ उसके अध्यक्ष पद पर आसीन बोल रहे थे. इस परिसंवाद में प्रा.दिलीप चौधरी, नीलिमा, प्रा.विजया मारोतकर ने भी अपने विचार पुष्प प्रस्तुत किए. अमर हबीब ने आगे कहा जग तूफानी गति से बदल रहा है. आनेवाले कल का काल बहुत बदला हुआ होगा, जो अच्छा है. जो नया उदय हो रहा है उसे संभालना होगा और कहीं कठिनाई हो तो दूर करनी होगी.

प्रा.दिलीप चौधरी बोले, मुझ पर बलात्कार तो नहीं होगा यह डर स्त्रियों को लगता है यह एक सांस्कृतिक दहशतवाद है. महिला को इस दहशत से मुक्त करना है तो उसकेबारे में स्वतंत्र विचार करने की आवश्यकता है. निलीमा काळे ने कहा कि इस देश में जो पुरूष प्रधान संस्कृति है उसने स्त्रियों पर बन्धन लादे हैं. इस संस्कृति से ही बालविवाह, सतिप्रथा जैसी रूढियां शुरू हुई. मानसिक विकृति से स्त्रियों पर बलात्कार होते हैं. स्त्रियों को अपना सामर्थ्य जानना चाहिए. दूसरों को दो देने की बजाय स्वयं दोषों को ढूंढ कर सुधार करने की सलह दी.

संचलन : चित्रलेखा धंदरे   आभार : वैशाली सूर

विषय : कुटुम्ब व्यवस्था और बाल संस्कार

दिलीप सोळूंके : इस समाज में निर्माण होनेवाला चोर माँ के गर्भ से निर्माण नहीं होता. हम समस्याओं पर चर्चा करते हैं पर कारणों को नहीं ढूंढते. जीवन कौशल निर्माण नहीं कर सके इसलिए आरोग्य के बडे बडे प्रश्न निर्माण हुए हैं. मां-बाप के झगडे गुन्हगारी निर्माण करते है.

निलीमा काळे : संयुक्त परिवार व्यवस्था में संस्कार करने की जिम्मेदारी सारे कुटुम्ब की होती थी, पर आज कुटुम्ब व्यवस्था संभालने के लिए अलग अलग प्रशिक्षण की आवश्यकता शुरू हो गई. बालसंस्कार में मां का योगदान सबसे महत्वपूर्ण है. पालकों को भावनिक व्यवस्थापन सम्पन्न करना होगा. बच्चों पर अपनी बात जबरदस्ती लादो नहीं. उनकी क्षमता पहिचान की आवश्यकता है. नकार सुनने की क्षमता बच्चों में निर्माण नहीं की इसलिए ऐसिड फैंकने जैसी घटनाएँ हो रही हैं. बडी डिग्री नहीं ली तो कोई फरक नहीं पडेगा पर मनुष्य बन कर जीने की क्षमता निर्माण करें. पालाकों के मित्र बने, उनकी बात सुने और समझाएँ, आनेवाले कल की पीढी सक्षम बनाने के लिए आज त्याग करना होगा.

नरेन्द्र लांजेवार : बंटवारे वाले घर बचाने वाले. घर बचाने बहुत महत्व के हैं. इसके लिए होनेवाली चर्चा बहुत महत्व पूर्ण है. पालकों को प्रचंड बडा सन्मान बच्चों ने दिया. भूतकाल के गुण और पालकों पर लादें नहीं. कुछ पिपासू पालकों की अपेक्षा होती है. महत्वपूर्ण बात यह है कि बच्चों को गल्ती करने न देनेवाले पालक होते हैं. पर बच्चे गलती करके ही सुधरते हैं. ऐसे अनेक प्रकार के पालक होते हैं.

पालकत्व प्राप्त करने का हमारे पास कोई अभ्यासक्रम नहीं है. कुटुम्बव्यवस्था बहुत बिगड गई है. हम दुभंगे चेहरे लिए हुए हैं. अस्सी के दशक के बाद यह परिस्थिति अधिक तीव्र हो गई है. घर में संवाद बन्द हो गया. लड़की शाम को सात बजे से पहले घर में आए इसकी बजाय लड़को ने सात के अन्दर घर पहुंचने की जरूरत है. कुटुम्ब व्यवस्था में बालक ही नहीं पालक परेशान हैं.

विशेष उपस्थिति : सम्मेनाध्यक्ष उषाकिरण आत्राम, सम्मेलन के उद्घाटक अमर हबीब, स्वागताध्यक्ष वंदना वाटप

संचालन : ॲड.मनीषा डांगे

आभार : कमल खुजे

विषय : महिला मुक्ती के मार्ग की अड़चनें : अंधश्रद्धा

अध्यक्ष : प्रा. सुधा मालधुरे : समाजव्यवस्था में परिस्थिति की अडचन महिलाओं को है. हमने विचारशीलों के कहे विचारों को लेने के बजाय उनकी मूर्तियां बना दीं. स्त्री को मुक्ति चाहिए अर्थात् समान अधिकार चाहिए. मानसिकता का दबाव इतना है कि पुरुष स्त्रियों के अधिकार निश्चित करते हैं. यह मानसिक गुलामी है.

ज्योतिताई तोटेवार : अपने जीवन में घटनेवाली सबसे बडी अंधश्रद्धा की घटना अर्थात गर्भावस्था में उसके सामने रखी जानेवाली जलेबियां पेढों की थाली. श्रद्धा-अंधश्रद्धा में उलझ जाती है. नकारात्मक विचारों ने हमें पीछे कर दिया है. प्रथा परंपरा के जाल में महिलाएं फंसी पड़ी हैं. वैसी जान लेना प्रथा-परंपराओं को तोड़ना चाहिए. घर की परिस्थिति ठीक करने की अत्यन्त आवश्यकता है.

मंजुषा सावरकर : स्त्री का जीवन सदाघर की चौखट के अन्दर होता है. पुरूषों को मुक्त जीवन जीने की स्वतंत्रता है. मेरे बच्चे को किसी की नजर न लगे यह अंधश्रद्धा का पहला भाग है. कुटुम्बव्यवस्था अपने हाथ में है. केवल स्त्री, कहकर निर्णय लेते समय क्या यह विचार हम करते है क्या ? यह असली प्रश्न है. वर्षों से हम यही कर्मकांड करते आ रहे हैं. उसके बाहर निकलने के लिए हम तैयार नहीं. हममें स्वतंत्र विचार करने की शक्ति है इसका विचार हम करनेवाले हैं या नहीं. गली - गली में ढोंग ढकोसला फैला हुआ है और हम उसके बली चढ जाते हैं. परंपरा के बंधन में हम बंधी होने से नए विचार करने के लिए तैयार ही होते नहीं हैं. स्वयं को स्वयं की पहचान हो का अर्थ है स्त्री मुक्ति.

अर्चना चौधरी : गुलामी का पिंजड़ा आज महिलाओं को प्यारा लग रहा है. उसी गुलामी में, अंधश्रद्धा में जी रही हैं. महिला सबलीकरण सक्षमीकरण ऐसे सुन्दर नामों के अन्तर्गत शोषण शुरु है.

प्रा.विजया मारोतकर : परिवर्तन के प्रवाह में बहुत अडचने होती हैं. ''मां'' कह कर हर महिलाने बच्चों पर योग्य संस्कार करने चाहिए. (क्रमशः)

संचालन : माधुरी मसाडे

आभार : सुनीता कुंभारे

अनुवाद : डॉ.मधुश्री आर्य